RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल–011/2018-20

ओ३म्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख पत्र

वर्ष: 75, अंक : 22 एक प्रति 2 : रुपये
रविवार 12 अगस्त, 2018
विक्रमी सम्वत् 2075, सृष्टि सम्वत् 1960853119
दयानन्दाब्द : 194 वार्षिक शुल्क : 100 रुपये
आजीवन शुल्क : 1000 रुपये
दूरभाष : 0181-2292926, 5062726
E-mail: apspunjab2010@gmail.com,
www.aryapratinidhisabha.org

POSTAGE PRE-PAID
MAIL BUSINESS CENTRE
09 AUG 2018

वर्ष–75, अंक : 22, 9-12 अगस्त 2018 तदनुसार 28 श्रावण, सम्वत् 2075 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

क्रमिक उन्नति

ले०–स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

पृष्ठात्पृथिव्या अहमन्तरिक्षमारुहमन्तरिक्षाद्दिवमारुहम्।
दिवो नाकस्य पृष्ठात्स्व र्ज्योतिरगामहम्।।

–अथर्व० ४।१४।३

शब्दार्थ–अहम् = मैं पृथिव्या = पृथिवी के पृष्ठात् = पृष्ठ से [ऊपर उठकर] अन्तरिक्षम् = अन्तरिक्ष को आ-अरुहम् = चढ़ा हूँ। अन्तरिक्षात् = अन्तरिक्ष से दिवम् = द्यौ को आ-अरुहम् = आरूढ़ हुआ हूँ। नाकस्य = दुःखरहित दिवः = द्यौ के पृष्ठात् = पृष्ठ से अहम् = मैं स्वः+ज्योतिः = आनन्दमय प्रकाश को अगाम् = प्राप्त हुआ हूँ।

व्याख्या–इस मन्त्र में साधक की क्रमिक आध्यात्मिक उन्नति की चर्चा है। निम्न से उच्च, उच्च से उच्चतर और अन्त में उच्चतम दशा की प्राप्ति का यहाँ निदर्शन कराया गया है। पृथिवी, अन्तरिक्ष, नाक, द्यौ, स्वर्ज्योति–ये गुह्य परिभाषाएँ हैं। स्थूल देह को पृथिवी कहते हैं। आरम्भ में प्राकृतिक मनुष्य इस स्थूल शरीर को ही सब-कुछ समझता है। श्रवण से उसे ज्ञान होता है कि इससे ऊपर एक और शरीर है, जो इसकी अपेक्षा सूक्ष्म है। उसका चिन्तन करते-करते वह इनसे पृथक् प्रकाशमय आत्मा का भान करता है। आत्मदर्शन के अनन्तर उसे परमात्मप्राप्ति होती है। सूक्ष्म और कारण शरीर को यहाँ अन्तरिक्ष कहा गया है, आत्मा को 'नाक द्यौ' कहा है, आत्मा में प्रकाश है, साथ ही सुख भोगने की नैसर्गिक लालसा है। उससे उत्कृष्ट परमात्मा है जो आनन्दमय ज्योति है।

'पृथिवी' स्थूल देह को कहते हैं। जब निद्रा आ घेरती है और शरीर निश्चेष्ट हो जाता है, स्वप्न आते रहते हैं, पण्डितजन बतलाते हैं कि ये स्वप्न मन की सत्ता का प्रमाण है। जब स्वप्न आने बन्द होकर गहरी निद्रा आती है, जिससे जागकर मनुष्य कहता है, मैं ऐसा सोया कि मुझे कुछ पता न लगा। 'कुछ पता न लगा' यह पता किसको लगा ? ज्ञानीजन कहते हैं कि यह आत्मा है। देह की अपेक्षा मन सूक्ष्म, मन की अपेक्षा आत्मा सूक्ष्म है। आत्मा देह और मन दोनों पर शासन करता है। आत्मा की चेष्टा से ही ये दोनों सचेष्ट हैं। द्यौ के आलोक से ही पृथिवी और अन्तरिक्ष आलोकित होते हैं। शरीर त्यागने में विवश हुआ आत्मा स्वर्ज्योति= परमात्मा की सत्ता का अनुभव करता है। उसे प्राप्त करके और कुछ प्राप्तव्य शेष नहीं रहता। द्यौ से ऊपर उठकर स्वर्ज्योति की प्राप्ति मुक्ति है–'दिवस्पृष्ठं स्वर्गत्वा मिश्रा देवेभिराध्वम्' [अथर्व० ४।१४।२] = द्यौ के पालक स्वः = आनन्द को प्राप्त करके देवों के साथ मुक्तों के साथ मिल बैठो। देवों के साथ मिल बैठने के लिए 'स्वः' प्राप्त करना ही होगा। 'स्वः' को प्राप्त करने का मार्ग सीधा है–'स्वर्यन्तो नापेक्षन्त आ द्यां रोहन्ति रोदसी। यज्ञं ये विश्वतोधारं सुविद्वांसो वितेनिरे' [अथर्व० ४।१५।४] = जो उत्तम ज्ञानी 'विश्वतोधार' यज्ञ का विस्तार करते हैं, वे 'स्वः' को प्राप्त करने के लिए अन्य किसी साधन की अपेक्षा नहीं करते। पृथिवी, अन्तरिक्ष और द्यौ तक वे वैसे ही चढ़ जाते हैं

सामने बिठाकर समझाने योग्य बात का इतना उल्लेख भी बहुत है।

(स्वाध्याय संदोह से साभार)

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धि पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्।।

–ऋ० ७.५९।१३

भावार्थ–हे जगत् उत्पत्ति स्थिति प्रलयकर्ता परमात्मन्! आपका यश सब जगत् में व्याप रहा है, आप ही अपने भक्तों के शरीर आत्मा और समाज के बल को बढ़ाने वाले हैं। भगवन्! जैसे पका हुआ खरबूजा अपने लता बन्धन से छूट जाता है, ऐसे ही मैं भी मृत्यु के बन्धन दुःख से छूट जाऊँ, किन्तु मुक्ति से कभी अलग न होऊँ। आपकी कृपा से मुक्ति सुख को अनुभव करता हुआ सदा आनन्द में मग्न रहूँ।

त्वं विश्वस्य मेधिर दिवश्च ग्मश्च राजसि।
स यामनि प्रति श्रुधि।।

–ऋ० १.२५.२०

भावार्थ–हे बुद्धिमान् सर्वोत्तम प्रभो ! आप सारे जगत् के द्युलोक के प्रकाश करने वाले और सारी पृथिवी के स्वामी हैं। दयामय जब हम आपकी प्रेमपूर्वक प्रार्थना करें, तब आप सुनकर हमें प्रेमी भक्त बनावें, जिससे हमारा कल्याण हो।

ते स्याम देव वरुण ते मित्र सूरिभिः सह।
इषं स्वश्च धीमहि।।

–ऋ० ७.६६.९

भावार्थ–हे परमात्म देव! हम पर कृपा करें कि हम आपके ही प्रेमी भक्त स्तुतिगायक और मानने वाले होवें। केवल हम ही नहीं किन्तु, विद्वानों और बान्धव मित्रों के साथ, हम आपके प्रेमी भक्त होवें। भगवन्! आपकी कृपा से हम, धन धान्य और ज्ञान को प्राप्त होकर नित्य सुख को भी प्राप्त करें।

शं नो अज एकपाद् देवो अस्तु शं नोऽहिर्बुध्न्यः शं समुद्रः।
शं नो अपां नपात् पेरुरस्तु शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपा।।

–ऋ०७.३५.१३

भावार्थ–कभी भी जन्म न लेने वाला सदा एकरस व्यापक देव प्रभु हमें शान्ति प्रदान करे। जिस भगवान् की कभी कोई हिंसा नहीं कर सकता, ऐसा वह निर्विकार, सबका आदि मूल कारण और सबको हरा भरा रखने वाला हमें सुखदायक हो। सब प्रजाओं का रक्षक सबका उद्धार करने वाला सर्वव्यापक विद्वान् महात्माओं का सदा रक्षक, हमें शान्ति प्रदान करें।

अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना

ले.-डॉ. जगदीश शास्त्री चण्डीगढ़

विज्ञ पाठक सही समझ रहे हैं। यह शीर्षक आर्य समाज के छठे नियम का उत्तरांश है। पूरा नियम है-"संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।" आर्य समाज संगठन का उद्देश्य क्या है ? तथा उद्देश्य की प्राप्ति व उपलब्धि क्या है ? इस नियम में दोनों ही स्पष्ट हैं संसार का उपकार करना उद्देश्य है तथा स्वस्थ बलवान् शरीर, उन्नत आत्मा और उन्नत समाज का निर्माण इसकी उपलब्धि है। समाज की उपलब्धियां जितनी अधिक होंगी, इसका उद्देश्य उतना ही अधिक पूरा होगा। पृथ्वी पर इस समाज का होना उतना ही सार्थक, आवश्यक होगा। अन्यथा असफल, निष्क्रिय आर्य समाजें व बहुमूल्य दुर्लभ भूमि पर जगह-जगह खड़ी संस्था के भवन व्यर्थ सिद्ध होंगे अर्थात् ये संस्थाएं धरती का बोझ बन कर रह जाएंगी। इसलिए समय-समय पर इन संगठनों और संस्थाओं की स्थापना के उद्देश्य के सन्दर्भ, इनकी उपयोगिता और सफलता का परीक्षण करना आवश्यक है। जहां तक आर्य समाज के उद्देश्य की बात है निश्चय ही उद्देश्य श्रेष्ठ है, ईश्वरीय है, सदैव आवश्यक है। पर उद्देश्य की पूर्ति के लिए उठाए गए कदम तथा किए गए प्रयास परीक्षणीय हैं। इस समाज द्वारा किए गए आन्दोलन, जनजागरण, अभियान, प्रयास और प्रचार से विश्व मानव समाज की कितनी शारीरिक और आत्मिक उन्नति हुई है यह परीक्षणीय है। क्योंकि यदि हम मानव समाज के शरीर और आत्मा को उन्नत कर देते हैं, तो इसके परिणाम स्वरूप स्वतः ही उन्नत समाज प्राप्त होगा।

शारीरिक उन्नति-शारीरिक उन्नति का अभिप्राय है-स्वस्थ, बलवान् शरीर की प्राप्ति। इसके लिए विभिन्न उपाय करना। पर संसार के या भारत के मनुष्यों की शारीरिक, उन्नति के लिए आर्य समाज के पास कोई योजना नहीं है। यदि है तो उनका क्रियान्वयन नहीं है। आर्यवीर दल, वीरांगना दल, कुमार सभाएं, व्यायाम शालाएं नहीं हैं। शारीरिक, नैतिक शिक्षण गतिविधियां नहीं हैं, अथवा बंद हैं। वर्तमान कहीं-कहीं औषधालयों का संचालन किया जाता है। पर क्या औषधालय चलाकर, वैद्यों की व्यवस्था करके शारीरिक उन्नति पूरी कर सकेंगे ? नहीं कर सकते। औषध व वैद्य की व्यवस्था करना अति गौण कार्य है। मुख्य कार्य है-औषध और वैद्य के बिना आजीवन स्वस्थ रहने की कला सिखाना। आयुर्वैदिक, प्राकृतिक जीवनशैली का प्रशिक्षण देना। स्वास्थ्य रक्षा और वृद्धि की शिक्षा देना। आचार, आहार, दिनचर्या और ऋतुचर्या की शिक्षा देना। शारीरिक-मानसिक श्रमसंतुलन के प्रति जागरूक करना। इसके लिए सभी समाजों के द्वारा संस्था के अन्दर और बाहर नित्य नियमित आसन, प्राणायाम की कक्षा लगाना होगा। आहार, दिनचर्या, ब्रह्मचर्य की शिक्षा देना होगा। पुनः सभी समाजों में आर्यवीर दल तथा वीरांगना दल का पुनर्गठन करना होगा। कन्या और बाल शारीरिक शिक्षण की कक्षा लगाना होगा सायंकाल ट्यूशन पढ़ने की जगह शारीरिक श्रम, खेल, आसन, प्राणायाम, नैतिकशिक्षा के समय के रूप में अभिभावकों में जागृति लाना होगा। इसके लिए हमारे कुल धन का २५-३० प्रतिशत भाग शारीरिक उन्नति हेतु लगाना होगा। शारीरिक शिक्षण, स्वास्थ्य, आहार से संबंधित साहित्य का लेखन, प्रकाशन, वितरण व विक्रय में धन लगाना होगा। औषध और वैद्य के बिना स्वस्थ रहने की कला व विज्ञान सिखाना होगा तथा ऐसे साहित्य निःशुल्क व सशुल्क उपलब्ध कराने होंगे। औषध और वैद्यों की सेवा अति निर्धन, अनाथ लोगों के लिए की जा सकती है सबके लिए सदैव नहीं ; क्योंकि ऐसी सेवा देने वाली अन्य अनेक संस्थाएं हैं। युवापीढ़ी सदैव शरीर सौष्ठव और बल की उपासक होती है इस कारण आसन, व्यायाम, अस्त्र-शस्त्र संचालन, बलवृद्धि, स्वास्थ्य रक्षा और आत्मरक्षा के लिए शारीरिक गतिविधि को चलाना युवापीढ़ी को पुनः समाज में आकर्षित करने के उपाय भी हैं।

आत्मिक उन्नति-आत्मिक उन्नति का अभिप्राय है आस्तिकता की शिक्षा व प्रचार। आत्मा, परमात्मा के अस्तित्व तथा पृथक्त्व का ज्ञान देना। सृष्टि का सृजन, संचालन, संहरण किसी भी शरीरधारी के द्वारा संभव नहीं है। सर्वशक्ति-शुद्धि-बुद्धि-मुक्ति और आनन्द केवल सृष्टिकर्ता का ही गुण है। अतः शरीरधारी की उपासना छुड़ाकर केवल ईश्वर की उपासना सिखाना। सभी आत्माओं के लिए शरीर बनाकर जन्म देने वाला परमात्मा एक है। अतः वही सबका पिता, हम सब उसके पुत्र और आपस में भाई-भाई एक ही विश्वपरिवार के सदस्य हैं। ऐसा ईश्वर में पितृत्वभाव, मनुष्यों में भ्रातृभाव और विश्वकुटुम्बभाव का होना आत्मिक उन्नति है। संसार में रंग, रूप, लिंग, जाति, देश आदि का भेद शरीर के कारण है। शरीरधारी सभी आत्माओं का मूलस्वरूप, स्वभाव, सुख-दुःख, मान-अपमान की अनुभूति समान है। एक सृष्टिकर्ता होने के कारण उसका दिया ज्ञान और धर्म भी एक ही है। भिन्न-भिन्न मनुष्यों द्वारा स्थापित अल्पज्ञान, अन्धविश्वास, दुराग्रहयुक्त, परस्पर विरूद्ध विचारों वाले विश्व के अनेक मत, संप्रदाय ईश्वरीय नहीं हो सकते। अतः सांप्रदायिक कट्टरवाद, भेदभाव रहित; शारीरिक लिंग, वर्ण, जाति, देश के पक्षपात से रहित; आत्मिक स्तर पर सबके सुख-दुःख, मान-अपमान को समान समझने वाला सहिष्णु, परस्पर सहयोगी प्रवृत्ति वाले व्यक्ति का निर्माण आत्मिक उन्नति है। स्पष्ट है इस आत्मिक उन्नति के लिए आर्य समाज के पास कोई कार्ययोजना नहीं है। बिना योजना के अधिसंख्य समाजों में कुछ-कुछ होता है। कहीं सत्संग, भजन तो अपवाद स्वरूप कहीं योगाभ्यास आदि। इसे सुनियोजित करना होगा। आर्यसमाजों की पहचान मंदिर के रूप में नहीं 'शरीर-आत्मा शिक्षण केन्द्र' के रूप में बनानी होगी। समाजों में ध्यानशिक्षण की नियमित कक्षाओं के अभाव में समाज के सदस्य भी अन्य संगठनों में जाकर ध्यान की अनार्षविधि सीख रहे हैं। अतः ध्यान की कक्षाएं आरंभ करनी होंगी। अपने सदस्यों को ध्यान सिखाना होगा। ब्रह्मयज्ञ सनातन सन्ध्याविधि का पहले समाज और परिवार के प्रत्येक सदस्य को सम्यक् प्रशिक्षण देना होगा। मन्त्रों के उच्चारण और अर्थ का ज्ञान कराना होगा। ध्यान न करने वालों को केवल मन्त्रपाठ से तृप्ति नहीं होती, जिसके परिणाम स्वरूप वे हनुमान चालीसा आदि भी पढ़ना पंसद करते हैं। इसलिए सन्ध्या मन्त्रों के पद्यानुवाद का सस्वर पाठ का प्रचलन लाना होगा। साथ ही संसार की आत्मिक उन्नति के लिए लोगों को विभिन्न चालिसाओं के जाल से मुक्त कर आनन्द और मुक्तिदाता एक ईश्वर की सन्ध्या सिखाने की व्यवस्था करनी होगी। पद्यार्थ सहित सन्ध्या की २०-२२ पृष्ठों की पाकेट बुक्स करोड़ों की संख्या में छपानी, बेचनी और बांटनी होंगी। संसार में अज्ञान, अन्धविश्वास, कट्टरवाद फैलाने वाली विभिन्न मत, संप्रदायों की पुस्तकें बहुत हैं, बढ़ती ही जा रही हैं, सब जगह उपलब्ध हैं। इनकी जगह आध्यात्मिक साक्षरता, आत्मविज्ञान, अष्टांगयोग, ध्यान, प्राणायाम, सन्ध्योपासना की छोटी-बड़ी पुस्तकें लिखनी होंगी। इन्हें विश्व की सभी प्रमुख भाषाओं में अनुवाद एवं प्रकाशन कराके सामान्य जनता तक उपलब्ध कराना होगा। शारीरिक उन्नति के कार्य में संसार में अनेक संगठन कार्य कर रहे हैं। आत्मिक उन्नति में भी कुछ प्रशंसनीय कार्य हो रहे हैं। पर जैसी आध्यात्मिक उन्नति का यथार्थ कार्य आर्य समाज कर सकती है वैसी अन्य संस्थाओं द्वारा संभव नहीं है। इसी कारण आध्यात्मिक उन्नति के कार्य को सर्वोपरि महत्व देते हुए इस पर कुल आय का आधा से अधिक भाग खर्च करना होगा।

सामाजिक उन्नति-सामाजिक उन्नति का अभिप्राय है विश्व मानव समाज में ज्ञानात्मक, भावनात्मक, लक्ष्यात्मक और आध्यात्मिक एकता लाना। मनुष्य-मनुष्य के बीच एकता और समता का भाव जगाकर मानवहित के कार्यों के लिए संगठित करना, सहयोग देना और लेना। इसके बाधक तत्त्व

(शेष पृष्ठ 7 पर)

सम्पादकीय

सभी आर्य समाजें वेद प्रचार सप्ताह मनाएं

स्वाध्यायान् मा प्रमदः अर्थात् स्वाध्याय से कभी प्रमाद न करें यह कहकर हमारे ऋषियों ने हमें वेद का स्वाध्याय और चिन्तन करने की प्रेरणा दी है। स्वाध्याय के द्वारा मनुष्य की आत्मिक उन्नति होती है, वह अज्ञान रूपी अन्धकार से ज्ञान रूपी प्रकाश को प्राप्त करता है। आर्य समाज का मुख्य आधार ही वेदों का प्रचार-प्रसार करना है। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब से सम्बन्धित सभी आर्य समाजों के अधिकारियों से निवेदन है कि आर्य समाज के प्रचार-प्रसार को गति देने के लिए श्रावणी के दिनों में अपनी-अपनी आर्य समाजों में वेद प्रचार सप्ताह का आयोजन करें। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने आर्य समाज की स्थापना इसी उद्देश्य के साथ की थी कि वैदिक संस्कृति की रक्षा हो, पवित्र एवं कल्याणकारी वेदवाणी का घर-घर में प्रचार हो। वेदों के महत्व को समझते हुए ही महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने आर्य समाज के तीसरे नियम में लिखा कि- वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। इसीलिए हमें चिन्तन करना है कि हम उस परम धर्म का पालन कर रहे हैं या नहीं। इसलिए श्रावणी का यह पर्व महर्षि के ऋण से उऋण होने का समय है। हमारे ऋषियों-मुनियों ने वैदिक संस्कृति को सुदृढ़ बनाने के लिए स्वाध्याय की महिमा पर बल दिया है और यह श्रावणी का समय स्वाध्याय के लिए उत्तम माना गया है। महर्षि याज्ञवल्क्य ने स्वाध्याय को परम श्रम, राजर्षि मनु ने परम-तप, महर्षि दयानन्द ने परम धर्म, महर्षि पतञ्जलि ने परम योग, उपनिषद के ऋषियों ने परम सकन्ध और परम दीक्षा, शतपथकार परम यज्ञ तथा वेद परम रस कहते हैं। इसलिए सभी आर्य समाजें श्रावणी रक्षाबन्धन से लेकर श्री कृष्णजन्माष्टमी तक अपनी-अपनी आर्य समाजों में वेद प्रचार सप्ताहों का आयोजन करके लोगों को स्वाध्याय, सत्संग और वैदिक संस्कृति के साथ जोड़ने का प्रयास करें।

श्रावणी का पर्व हमें वेदाध्ययन के लिए प्रेरित करता है। अगर हम महर्षि दयानन्द के संदेश को घर-घर तक पहुंचाना चाहते हैं तो अपनी-अपनी समाजों में वेद प्रचार सप्ताह अवश्य मनाएं। वेद के विषय में महर्षि का जो मत है, जो विचार है उस विचार को जन-जन तक पहुंचाने के लिए हमें वेद प्रचार को बढ़ावा देना होगा। श्रावणी के पर्व पर हम वेद के स्वाध्याय का व्रत लें। वेद का अध्ययन हमें मानव बनाता है। महर्षि दयानन्द ने वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना आर्यों का परम धर्म बताया है। इस परम धर्म का पालन करने के लिए हमें श्रावणी पर्व पर व्रत ग्रहण करना है। हम घर-घर में वेद तथा महर्षि दयानन्द के संदेश को फैलाएं। आर्य समाजों का लक्ष्य वेद प्रचार होना चाहिए। सभी समाजें श्रावणी पर्व पर लोगों को स्वाध्याय करने के लिए प्रेरित करें। वैदिक साहित्य लोगों में बांटे और उसे पढ़ने के लिए प्रेरित करें। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब द्वारा वेद प्रचार के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए कई वर्षों से वैदिक साहित्य आधे मूल्य पर दिया जाता है। लोगों में जागृति लाने के लिए साहित्य का विशेष स्थान है। वैदिक साहित्य मनुष्य की बृद्धि को परिष्कृत करता है। मनुष्य के मन में उत्पन्न होने वाली सभी शंकाओं का समाधान वैदिक साहित्य के द्वारा ही सम्भव है। इसलिए आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब वेदों के सैट, महर्षि दयानन्द की जीवनी, सत्यार्थ प्रकाश, संस्कारविधि, योगेश्वर कृष्ण, स्वाध्याय सर्वस्व, स्वाध्याय संदोह, स्वाध्याय संदीप, वैदिक विनय तथा बच्चों के लिए बाल सत्यार्थ प्रकाश आधे मूल्य पर उपलब्ध कराती है। इसके पीछे सभा का उद्देश्य सिर्फ वैदिक विचारधारा का प्रचार-प्रसार करना है। सभी आर्य समाजें इन दिनों में एक-एक सप्ताह का वेद प्रचार सप्ताह अवश्य मनाएं, लोगों में वैदिक साहित्य बाँट कर स्वाध्याय के साथ जोड़े और लोगों को वेद के बारे में, महर्षि दयानन्द और आर्य समाज के बारे में जागरूक करें।

श्रावणी पर्व के एक सप्ताह के बाद श्रीकृष्ण जन्माष्टमी का पर्व आता है। योगीराज श्रीकृष्णचन्द्र जी महाराज का सम्पूर्ण जीवन हमारे लिए प्रेरणास्रोत है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी सत्यार्थ प्रकाश में श्रीकृष्ण के शुद्ध स्वरूप का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि- देखो! श्रीकृष्ण जी का इतिहास महाभारत में अत्युत्तम है। उनका गुण, कर्म, स्वभाव और चरित्र आप्त पुरूषों के सदृश है जिसमें कोई अधर्म का आचरण श्रीकृष्ण जी ने जन्म से मरण पर्यन्त बुरा काम कुछ भी किया हो ऐसा नहीं लिखा और इस भागवत वाले ने अनुचित्त मनमाने दोष लगाएं हैं। दूध-दहीं, मक्खन आदि की चोरी और कुब्जा दासी से समागम, परस्त्रियों से रासलीला, क्रीडा आदि मिथ्या दोष श्रीकृष्ण में लगाएं हैं। इसको पढ़-पढ़ा, सुन-सुना के अन्य मत वाले श्रीकृष्ण की बहुत सी निन्दा करते हैं। जो यह भागवत वाले न होते तो श्रीकृष्ण जी के सदृश महात्माओं की झूठी निन्दा क्योंकर होती। महर्षि दयानन्द की दृष्टि में श्रीकृष्ण योगी थे। परन्तु आज श्रीकृष्ण के स्वरूप को देखकर, लोगों के द्वारा उनका जन्मदिवस मनाने का ढंग देखकर सभ्य व्यक्ति का सिर शर्म से झुक जाता है। ऐसे योगीराज, महामानव, चरित्रनायक के जीवन के साथ वास्तव में अन्याय हुआ है। महापुरूषों के जीवन चरित्र में जितना अन्याय हिन्दू समाज ने श्रीकृष्ण के साथ किया है उतना अन्य किसी महापुरूष के साथ नहीं हुआ है। इसलिए जन्माष्टमी का पर्व मनाते हुए हम श्रीकृष्ण के शुद्ध और आप्त स्वरूप को जनता के समक्ष रखें।

श्रावणी के पर्व पर वेदों का स्वाध्याय करना, महापुरूषों को याद करके उनके जीवन से प्रेरणा लेना ऋषि तर्पण कहलाता है। ऋषियों के ऋण से उऋण होने के लिए हमें श्रावणी पर्व से स्वाध्याय का संकल्प लेना चाहिए और यह संकल्प वर्ष भर चलना चाहिए। जिस प्रकार शरीर के लिए अच्छे और पौष्टिक आहार की आवश्यकता होती है तथा शारीरिक उन्नति होती है, उसी प्रकार आत्मिक उन्नति करने के लिए स्वाध्याय करना आवश्यक है। स्वाध्याय से मनुष्य के अन्दर आध्यात्मिक वृद्धि होती है और वह आत्मिक उन्नति को प्राप्त होता है। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब से सम्बन्धित सभी आर्य समाजों और शिक्षण संस्थाओं के अधिकारियों से निवेदन है कि सभी आर्य बन्धु मिलकर इन दोनों पर्वों को बड़े उत्साह के साथ अपनी-अपनी समाजों और शिक्षण संस्थाओं में मनाएं। आम जनता तथा बच्चों को इन दोनों पर्वों का शुद्ध स्वरूप बताएं। लोगों को इस पर्व के सांस्कृतिक और ऐतिहासिक महत्व के बारे में बताएं और सभी को वेद तथा वैदिक साहित्य पढ़ने के लिए प्रेरित करें। योगीराज श्रीकृष्ण के शुद्ध स्वरूप से जनता को अवगत कराएं। महापुरूषों के शुद्ध स्वरूप को बताना हमारा परम धर्म है। इसलिए आप सभी से विनम्र निवेदन है कि इस प्रकार का लक्ष्य लेकर हम सभी वेद प्रचार के कार्य में जुट जाएं और महर्षि के ऋण से उऋण होने का प्रयास करें।

-प्रेम भारद्वाज
सम्पादक एवं महामंत्री

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी त्यौहार 2 सितम्बर को

स्त्री आर्य समाज दाल बाजार लुधियाना में श्री कृष्ण जन्मष्टमी का त्यौहार 2 सितम्बर 2018 को प्रात: 9.30 बजे से 12.00 बजे तक बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया जा रहा है। इस अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रसिद्ध महोपदेशक श्री विजय शास्त्री जी पधार रहे हैं। इसलिये सभी आर्य जनों से निवेदन है कि इस अवसर पर पधार कर इस उत्सव की शोभा बढ़ायें और धर्म लाभ उठावें।

-जनक आर्या, मंत्राणी स्त्री आर्य समाज

आर्य समाज जवाहर नगर लुधियाना का वार्षिक उत्सव

आर्य समाज जवाहर नगर लुधियाना का वार्षिक उत्सव 23, 24 एवं 25 नवम्बर 2018 को बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया जा रहा है। इस कार्यक्रम में आर्य जगत के प्रसिद्ध विद्वान एवं भजनोपदेशक पधार रहे हैं। इसलिये लुधियाना की सभी आर्यसमाजों से अनुरोध है कि इन तिथियों में अपनी आर्य समाज का कोई कार्यक्रम न रखें। कृपया इन तिथियों को अंकित कर लें और कार्यक्रम में पधार का धर्म लाभ उठावें।

-विजय सरीन, प्रधान

गृहपति के कर्त्तव्य-अथर्ववेद

ले०-शिवनारायण उपाध्याय, 73 शास्त्री नगर दादाबाड़ी, कोटा

किसी भी परिवार को विकास के रास्ते पर अग्रसर करने पर परिवार के मुखिया गृहपति का मुख्य उत्तरदायित्व होता है। परिवार के भरण-पोषण, बालकों की उचित देखभाल एवं शिक्षा व्यवस्था, अस्वस्थता की स्थिति में परिवार के किसी भी सदस्य को आवश्यक चिकित्सकीय सेवा प्राप्त कराना तथा बीमार की उचित देखभाल की व्यवस्था करना, भविष्य के विकास की योजना बनाना तथा उनको क्रियान्वित करना सब उसके उत्तरदायित्व में समाहित होता है। अथर्ववेद में इस विषय पर भी चिंतन हुआ है। अथर्ववेद काण्ड 19 सूक्त 31 के 14 मंत्रों में इसी विषय की चर्चा है।

औदुम्बरेण मणिना पुष्टिकामाय वेधसा।

पशूनां सर्वेषां स्फातिं गोष्ठे मे सविता करत्।। अथर्व 19.31.1

अर्थ-(औदुम्बरेण) संगठन चाहने वाले (मणिना) श्रेष्ठ (वेधसा) जगत् स्रष्टा (परमेश्वर) के साथ (पुष्टिकामाय) वृद्धि की कामना करने वाले (मे) मेरे लिए (सविता) सर्व प्रेरक (गृहपति) (सर्वेषाम्) सब (पशूनाम्) पशुओं की (स्फातिम्) बढ़ती (गोष्ठे) गोशाला में (करत्) करें।

भावार्थ-वैदिक धर्म में परमात्मा से जो प्रार्थना की जाती है और जिसमें उससे कुछ मांगा जाता है इससे लगता है कि आर्य लोग पुरूषार्थ रहित थे और वे अपने लिए सब कुछ परमात्मा से ही मांगते रहते थे और उसी पर निर्भर रहते थे परन्तु वास्तविकता यह नहीं है आर्य लोग पुरूषार्थी रहे हैं और पुरूषार्थ से ही सब कुछ अर्जित भी करते रहते थे परन्तु उनमें यह भावना गहराई से बैठी हुई थी कि हम पुरूषार्थ तो कर रहे हैं परन्तु उसका फल तो अपने हाथ में नहीं है फल दाता तो परमेश्वर है इसलिए वे परमेश्वर से प्रार्थना करते थे। इस मंत्र में यह व्यक्त किया गया है कि सर्व प्रेरक गृहपति परिवार में अधिक से अधिक पशु धन की कामना करता है ताकि परिवार के सदस्यों को दूध, मट्ठा, मक्खन, घी आदि उचित मात्रा में मिलता रहे और परिवार में सब निरोग रहें, उनके अन्दर रोग प्रतिरोधी शक्ति पर्याप्त मात्रा में हो जिससे कि रोगाणु आक्रमण कर भी दें तो भी वे अस्वस्थ न होवें। इसके लिए वह प्रयत्न भी करता है, पशु धन को बढ़ाता भी है परन्तु परमेश्वर से प्रार्थना करने की बात को विस्तृत नहीं करता है।

यो नो अग्निर्गार्हपत्यः पशुनामधिया असत्।

औदम्बरो वृषा मणिः स मा सृजतु पुष्ट्या।।2।।

अर्थ-(यः) जो (गार्हपत्यः) गृहपति की स्थापित (अग्निः) अग्नि (के समान तेजस्वी परमेश्वर)(नः) हमारे (पशूनाम्) पशुओं का (अधिपाः) बड़ा स्वामी (असत्) है।(सः) वही (ओदम्बरः) संगठन चाहने वाला (मणिः) श्रेष्ठ (वृषा) वीर्यवान् (परमेश्वर) (मा)मुझको (पुष्ट्या) वृद्धि के लिए (सृनतु) संयुक्त करे।

भावार्थ-गृहपति का यह कर्त्तव्य है कि वह गृह पशुओं की संख्या में वृद्धि करता रहे। परिवार श्री वृद्धि के साथ परिवार में पशु और परिवार की सदस्य संख्या में भी वृद्धि होवे।

कुटुम्ब का ठीक तरह से भरण पोषण हो इसके लिए घर धन-धान्य से परि पूरित रहना आवश्यक है। आर्य लोग निर्धनता को पाप समझते हैं।

करीषिणीं फूलवतीं स्वधामिरां च नो गृहे।

औदुम्बरस्य तेजसा धाता पुष्टिं दधातु मे।। अथर्व, 19.31.3

अर्थ-(नः) हमारे (गृहे) घर में (औदुम्बरस्य) संगठन चाहने वाले (परमेश्वर) के (तेजसा) तेज से (करीषिणीम्) बहुत गोबर वाली (फलवतीम्) बहुत फल वाली (स्वधाम्) बहुत अन्नवाली (च) और (इराम्) बहुत भूमि वाली (पुष्टिम्) वृद्धि को (धाता) पोषक (गृहपति) (मे) मुझे (दधात्) देवे।

भावार्थ-परिवार को सुखी जीवन व्यतीत करने के लिए आवश्यक है कि उसके पास दूधारू पशुओं की पर्याप्त संस्था हो, फलों के लिए बगीचा हो और दालें तथा अनाज उत्पन्न करने के लिए पर्याप्त कृषि भूमि होवे। इन सबकी प्राप्ति की न्यूनता नहीं होनी चाहिए। कहा भी है-

यत्भूमा तत् सूखम् न अल्पे सुखं अस्ति। (छान्दोग्योपनिषद्)

यद् द्विपाच्च चतुष्पाच्च यान्यन्नानि ये रसाः।

गृह्णे३हं त्वेषां भूमानं बिभ्रदौदुम्बरं मणिम्।। अथर्व. 19.31.4

अर्थ-(यत्) जो कुछ (द्विपात्) दोपाया (च) और (चतुष्पात्) चौपाया है (च) और (यानि) जो जो (अन्नानि) अन्न और (ये) जो जो (रसाः) रस हैं। (औदुम्बरम्) संगठन चाहने वाले (मणिम्) श्रेष्ठ (परमेश्वर) को (बिभ्रत) धारण करता हुआ (तु) ही (अहम्) मैं (एषाम्) इनकी (भूमानम्) बहुतायत को (गृह्णे) ग्रहण करूं।

भावार्थ-मनुष्य अपने पुरूषार्थ और परमात्मा की उपासना से उत्तम प्रजा, उत्तम दूध, घी, गुड़ आदि की प्रचुरता रखे।

गृहपति घर में सब पदार्थों की प्रचुरता के साथ परिवार के सदस्यों के स्वास्थ्य पर भी ध्यान दे और कुछ सामान्य रोगों की ओषधियों का संग्रह भी घर में रखे।

पुष्टिं व शूनां परि जग्रभाहं चतुष्पदां द्विपदां यच्च धान्यम्।

पयः पशूनां रसोषधीनां बृहस्पतिः सविता मे नि यच्छात्।।5।।

अर्थ-(अहम्) मैंने (चतुष्पदाम्) चौपाए और (द्विपदाम्) दो पाए (पशूनाम्) जीवों की (च) और (यत्) जो (धान्यम्) धान्य है (उसकी भी) (पुष्टिम्) बढ़ती को (परि) सब ओर से (जग्रभ) ग्रहण किया है। (पशूनाम्) पशुओं का (पय) दूध और (ओषधीनाम्) ओषधियों का (रसम्) रस (बृहस्पतिः) बड़े ज्ञानी का रक्षक (सविता) सर्व प्रेरक (गृहपति) वा परमेश्वर (मे) मुझे (नि) नित्य (यच्छात्) देवें।

भावार्थ-गृहपति घर में आवश्यक पदार्थों के संग्रह के साथ कुछ सामान्य ओषधियों का संग्रह भी घर में रक्खे।

आर्य लोग सदैव ऐश्वर्य का जीवन जीना चाहते हैं।

देवो मणि, सपत्नहा धनदा धनसातये।

पशोरन्नस्य भूमानं गवां स्फातिं नियच्छतु।। अथर्व. 19.31.8

अर्थ-(देवः) प्रकाशमान (मणिः) प्रशंसनीय (सपत्नहा) शत्रुओं को मारने वाला (धनदाः) धनों का देने वाला (परमात्मा) (धन सातये) धनों के दान के लिए (पशोः) प्राणियों को ओर (अन्नस्य) अन्न की (भूमानम्) बहुतायत और (गवान्) गायों की (स्फातिम्) बढ़ती (नि) नित्य (यच्छतु) देवे।

भावार्थ-गृहपति पुरूषार्थ द्वारा और परमात्मा की कृपा से पर्याप्त धन संग्रह करे और दानशील बनें।

आ मे धनं सरस्वती पयस्फातिं च धान्यम्।।

सिनीवाल्मुपां वहादयं चौदुम्बरो मणिः ।। 10।।

अर्थ-(सिनीवाली) अन्न देने वाली (सरस्वती) विज्ञानवती विद्या (च) और (अयम्) यह (औदुम्बरः) संगठन चाहने वाला (मणिः) प्रशंसनीय (परमात्मा) (मे) मेरे लिए (पयस्फातिम्) दूध की बढ़ती (च) और (धनम्) धन और (धान्यम्) धान्य (अन्न) (आ) सब ओर से (उप) समीप (बहात्) लावें।

भावार्थ-घर में धन, धान्य की सदैव बढ़ती रहे।

त्वं मणीनामधिपा वृषासि त्वयि पुष्टं पुष्टपतिर्जजान।

त्वयी मे वाजा द्रविणानि सर्वोदुम्बरः स त्वमस्मत् सहस्वारादरातिममतिं शुधे च ।।11।।

अर्थ-हे परमात्मन्। (त्वम्) तू (मणीनाम्) मणियों (प्रशंसनीय पदार्थों का (अधिपाः) बड़ा राजा और (वृषा) बलवान् (असि) है। (त्वयि) तुझ में ही (पुष्टम्) पोषण को (पुष्टपतिः) पोषण के स्वामी (धनी पुरूष) ने (जजान) प्रकट किया है। (त्वयि) तुझ में ही (इमे) यह (वाजाः) अनेक बल और (सर्वा) सब (द्रविणानि) धन है। (सः) सो (औदुम्बरः) संगठन चाहने वाले (त्वम्) तू (अस्मत्) हम से (अरातिम्) अदान शीलता (अमतिम्) कुमति (च) और (क्षुधम्) भूख को (आरात्) दूर (सहस्व) हटा दे।

भावार्थ-इस मंत्र में परमात्मा को धन्यवाद देते हुए कहा गया है कि हे परमात्मन्। आप प्रशंसनीय सभी पदार्थों के स्वामी हो। आप से ही

(शेष पृष्ठ 7 पर)

विद्ययामृतमश्नुते

ले.-डा. निर्मल कौशिक 163, आदर्श नगर ओल्ड कैंट रोड फरीदकोट (पंजाब)

स्वामी दयानन्द सरस्वती एक युग पुरूष थे। उन्होंने अपने आत्मानुभवों से एक ऐसी विचारधारा का सूत्रपात किया जो सृष्टि के अन्त तक मानव समाज का पथ आलोकित करती रहेगी। वेदों का अध्ययन और चिन्तन करके जिस अमृत का दोहन किया वह निश्चित रूप से आत्मा का उद्धार करने वाला है। उन्होंने अपने अध्यात्म से इन्द्रिय निग्रह कर चेतना को उजागर किया मानवता का कल्याण करने हेतु वे अकेले ही निकल पड़े। भारतीय संस्कृति के संरक्षण हेतु उन्होंने समाज में विकृतियों और कुरीतियों को दूर करने का संकल्प लिया। वे सत्य की खोज में वेदवाणी के माध्यम से अध्यात्म के क्षेत्र में 'असतो मा सदगमय, मृत्योर्मामृतम् गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय के पथ पर निरन्तर अग्रसर होते चले गए। उन्होंने तिमिर से प्रकाश की ओर जाने के लिए निरन्तर साधना की और स्वामी विरजानन्द जी जैसे ज्ञान पुंज को अपना गुरु धारण किया। क्योंकि गुरु ही अन्धकार को मिटा कर ज्ञान शलाका द्वारा अज्ञान के कारण बन्द आंखे खोल सकता है। जैसा कि कहा भी है।

अज्ञान तिमिरान्धस्य ज्ञान अञ्जन शलाक्या

चक्षुरन्मीलित येन तस्मैं श्री गुरुवे नमः

शायद इसीलिए कबीर ने भी गुरु को ईश्वर से भी बढ़कर कहा है।

गुरु गोबिन्द दोऊ खड़े काके लागू पाय

बलिहारी गुरु आपने जिन गोबिन्द दियो बताय।

स्वामी जी ने आजीवन, भारतीय जनजीवन के उत्थान हेतु कार्य किया। भारतीय संस्कृति के महत्व को वेदवाणी, यज्ञक्रिया, विद्या का प्रचार प्रसार, व नारी उत्थान जैसे पुण्य कार्यों के द्वारा जन-जन तक पहुंचाया। एक आन्दोलन के रूप में नैतिक मान्यताओं और जीवन मूल्यों का पुनरूद्धार किया। विषय परिस्थितियों में भी उन्होंने स्वयं को देश सेवा में समर्पित कर दिया। 10 अप्रैल सन् 1875 को उन्होंने मुम्बई में अपने अनुयायियों के परामर्श से 'आर्य समाज की स्थापना की। उस समय स्वामी जी ने अपने गुरु स्वामी विरजानन्द जी के सामाजिक पुनरुद्धार के उद्देश्यों को पूर्ण करने हेतु एक संविधान भी तैयार किया। इस संविधान का उद्देश्य था कि पूरे विश्व में 'आर्य समाज' संस्थाओं और संस्थानों में समान रूप से नियमित कार्य हो। अनुशासन की व्यवस्था बनी रहे। इन संस्थाओं और संस्थानों के माध्यम से वेदों के अध्ययन का प्रचार प्रसार हो।

स्वामी दयानन्द जी की हार्दिक कामना थी कि आर्य समाज विश्व से अज्ञान, असत्य, अविद्या को मिटा कर वेदवर्णित ज्ञान, सत्य और विद्या का प्रचार प्रसार कर मानव को सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा दें। आर्य समाज मानव को श्रेष्ठ मानव बनने के लिए मार्ग प्रशस्त करता है। अज्ञानता के कारण ही मानव ज्ञान की ओर अग्रसर नहीं हो पाता है। वह असत्य के मार्ग पर भटकता रहता है। गीता में भगवान कृष्ण ने श्रेष्ठ मानव का लक्ष्य बताते हुए कहा है कि लोग जिसके आचरण को प्रमाण मानकर अनुसरण करते है वही श्रेष्ठ पुरुष है। वही श्रेष्ठ पुरुष है।

यद्दाचरति श्रेष्ठतत् देवेतरो जनाः

स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तनुवर्तते।।3/21

किसी अन्य कवि ने भी कहा है कि श्रेष्ठ पुरुष का आचरण सद्कार्यों की ओर प्रवृत्त होता है। अच्छे आचरण के कारण ही लोग उस जीवन से कुछ सीख पाते है। सत्कर्म करने से ही समाज में उसकी प्रतिष्ठा होती है।

काम अच्छे कर लो है जिन्दगानी आपकी। लोग भी सीखे सबक सुनकर कहानी आपकी।

स्वामी दयानन्द पूरे विश्व को 'आर्य' (श्रेष्ठ) बनाना चाहते थे। उन्होंने अन्धविश्वास (अज्ञानता) और असत्य को दूर करके 'विद्या' का प्रचार प्रसार करने हेतु वेदों के 'ज्ञान' का प्रकाश फैलाया और 'यज्ञकर्म' द्वारा सत्कर्म करने की प्रेरणा दी। 'वेद मन्त्रों' के रहस्यों का भेद खोलकर आध्यात्मिक उन्नति का मार्ग सरल कर अनेक जीवों का उद्धार किया।

'अध्यात्म' शब्द दो शब्दों के संयोग से बना है। अधि+आत्म = अधि का अर्थ है समीप होना आत्म का अर्थ है आत्मा (स्वयं) अपने समीप होना अर्थात् स्वयं को जानना ही अध्यात्म कहलाता है। स्वयं को जानने हेतु 'विद्या' ही एक मात्र साधन है। विद्या के प्रचार प्रसार हेतु उन्होंने शिक्षण संस्थानों की स्थापना की। नारी शिक्षा की वकालत भी की। उन्होंने 'स्वाध्याय' को भी प्रोत्साहन दिया। 'विद्या' ही एक ऐसा साधन है जो मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करता है। यजुर्वेद 40वें अध्याय में कहा गया है कि विद्यां चाविद्यां च यस्त द्वेदो भयॅं सह। अविद्या मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते।।

अर्थात् जो मनुष्य विद्या और अविद्या के यजुः अ.40/म./4।। स्वरूप को साथ ही साथ जानता है वह अविद्या अर्थात् कर्मोपासना से मृत्यु को पार कर विद्या अर्थात् यथार्थज्ञान से मोक्ष को प्राप्त होता है।

स्वामी दयानन्द 'सत्यार्थ प्रकाश' के नवम समुल्लास में लिखते हैं। 'जिससे पदार्थों का यथार्थ स्वरूप बोध होवे वह 'विद्या' और जिससे तत्त्व स्वरूप न जान पड़े अन्य में अन्य बुद्धि होवे वह अविद्या इसलिए है कि यह बाह्य और अन्तर क्रिया विशेष नाम है: ज्ञान विशेष नहीं। स्वामी जी ने विद्या को ही जानने का महत्त्व नहीं बताया उन्होंने अविद्या को जानने पर भी बल दिया है। इसलिए अविद्या को ग्रहण किया जा सकता है। आर्य समाज के 'दस नियमों' के निर्धारण में भी स्वामी जी ने प्रथम नियम में विद्या को सत्य विद्या कहा है और सभी पदार्थो का ज्ञान देने वाली विद्या ही है। स्वामी जी ने तीसरे नियम में वेद को ही सब सत्य विद्याओं का पुस्तक कहा है। वेद के महत्त्व को समझते हुए उन्होंने कहा कि वेद का पढ़ना-पढ़ाना सुनना सुनाना सब आर्यो का परमधर्म है। आठवें नियम में स्वामी जी ने अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करने के लिए सभी आर्य समाज के अनुयायियों को प्रेरित किया है।

इस प्रकार हम देखते है कि आर्य समाज की स्थापना के पश्चात् स्वामी जी ने आर्य समाज के सिद्धान्तों के रूप में एक संविधान भी तैयार किया। अनुशासन में बने रहने के लिए 'आर्य समाज' के संस्थानों और संस्थाओं व आर्य समाज के समुदाय के लिए नियम निर्धारित किए। दस नियमों में उन्होंने अपनी ज्ञानानुभूति से अर्जित अपने सन्देश का निष्कर्ष प्रस्तुत किया। वेदों का अध्ययन और ज्ञानार्जन करने से मनुष्य सत्य और असत्य विद्या और अविद्या, शुभ और अशुभ में अन्तर कर सकता है। जीवन का लक्ष्य पा सकता है। 'यज्ञ' से सामाजिकता की भावना आती है पर्यावरण का संरक्षण होता है। प्रत्येक आर्य समाज के सिद्धान्तों के अनुयायी को स्वामी दयानन्द के दर्शाएं मार्ग पर चलकर + वेदवाणी द्वारा अपने अन्दर ज्ञान (विद्या) की ज्वाला को प्रज्जवलित करना होगा। जिस दीये में प्रकाश न हो वह मार्ग कैसे दिखाएगा। अन्धकार को दूर कैसे करेगा। अतः प्रत्येक मानव को अपने अन्दर ज्ञान का प्रकाश (उजाला) चाहिए ताकि हम, अन्धकार, अज्ञान, अविद्या असत्य, अनैतिक और अशुभ से दूर रह कर अपना जीवन सफल कर सकें।

"'परमेश्वर' जगत् का रचयिता

लेखिका-मृदुला अग्रवाल-19सी सरत बोस रोड़-कोलकाता

"परमेश्वर" जो इस सम्पूर्ण जगत् का रचयिता है, वह तीन प्रकार के स्थूल, सूक्ष्म और कारण रूप जगत् का रचयिता होकर भी इनसे अलग है। वह इस दृष्टिगोचर जगत् के सब पदार्थों में विद्यमान है। वह सर्वव्यापी, अन्तर्यामी, सबके जीवन का आधार है। वह सृष्टि-रचयिता परमेश्वर "हिरण्यगर्भ" है। स्वामी दयानन्द जी ने संस्कार-विधि में "हिरण्यगर्भ:" का अर्थ "स्वप्रकाश-स्वरूप" लिखा है। अपना प्रकाश ही परमेश्वर का स्वरूप है।

"हिरण्यगर्भ: समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकआसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम।।"
-यजुर्वेद, अध्याय-१३, मन्त्र-४।।

अर्थात्-हिरण्यगर्भ: जो परमेश्वर है, वही एक इस सृष्टि के रचने से प्रथम विद्यमान था। जीव गाढ़ निद्रा सुषुप्ति में लीन और जगत् का कारण अत्यन्त सूक्ष्मावस्था में आकाश के समान एक रस स्थिर था। जो सब जगत् का स्वामी पृथिवी से लेकर प्रकाशमान सूर्य पर्यन्त सब जगत् का स्वामी पृथिवी से लेकर प्रकाशमान सूर्य पर्यन्त सब जगत् को रच के धारण करता है एवं अन्त समय में प्रलय भी करता है, उस सुखरूप प्रजा पालने वाले प्रकाशमान परमेश्वर की सब मनुष्य उपासना करें।

परमेश्वर को छोड़ के अपने-आप स्वभाव मात्र से सिद्ध होने वाला अर्थात् जिसका कोई स्वामी न हो ऐसा संसार व जगत् नहीं हो सकता, क्योंकि जड़ पदार्थों के अचेतन होने से यथा योग्य नियम के साथ उत्पन्न होने की योग्यता कभी नहीं होती। परमेश्वर कायारहित एक अध्यात्म चेतन सत्ता है जो सृष्टि के कण-कण में मौजूद है। हम साधारण मनुष्य उसे देख नहीं सकते। जो मेधावी विद्वान परमेश्वर को अपनी ज्ञानदृष्टि से, दिव्य विद्याओं के प्रकाश से, समाधियुक्त योग एवं प्राणायम से, शास्त्र एवं वेद के स्वाध्याय से युक्त बुद्धियों से जानकर पुरूषार्थी होते हैं, वे ही निर्मल विज्ञान से श्रेष्ठ तथा शुद्ध ज्ञान द्वारा उसके प्रकाश को अनुभव कर सकते हैं।

सृष्टि-उत्पत्ति के समय अपने कार्यों को करने में स्वयं समर्थ, किसी दूसरे की सहायता की अपेक्षा न रखने वाला परमेश्वर "य: स्वयं भवति स स्वयंभूरीश्वर:" जो आप से आप ही है, किसी से भी उत्पन्न नहीं हुआ है, इससे उसका नाम "स्वयंभू:" है।
-सत्यार्थ प्रकाश, समुल्लास-१।।

"स्वयंभू" अनादिकाल से निरन्तर वर्ष-वर्षान्तर से सृष्टि का यथार्थ प्रबन्ध करता है।

मीमांसा-दर्शन महर्षि-जैमिनी पुणीत-मनुष्य आनन्दमय है। वह सुख चाहता है, विघ्नों को हटाकर दु:ख दूर करना चाहता है। धन-साधन-सम्पन्नता से सुविद्या बढ़ती है, पर आन्तरिक सुख नहीं मिलता है। ऐसे में परमेश्वर के प्रति श्रद्धा और उसकी कृपा ही समस्या का समाधान है। दर्शन-विद्या के बिना व्यक्ति स्वयं का दोष कभी नहीं जान पाता।

मनुष्य-जीवन एक यज्ञ है। इसके रचयिता परमेश्वर हैं। वही इस जगत्रूपी यज्ञ को सिद्ध करके हम सबको सुखयुक्त करता है। परमेश्वर ने जीवात्माओं के जन्म-मरण की व्यवस्था हेतु सृष्टि का निर्माण किया। वह स्वयं अजन्मा है। जहाँ जन्म है वहाँ मृत्यु भी निश्चित है। परमेश्वर इस सत्य को जानता है।

सब प्राणियों के लिए उनके यथायोग्य शुभ-अशुभ कर्मों के अनुसार सुख-दु:ख रूपी फल को भोग कराता है। जो जिस वस्तु के योग्य है उसके कल्याणहेतु न्याय प्रदान करता है। मनुष्य-जीवन परमेश्वर की न्यायकारी व्यवस्था के अन्तर्गत है, जो हमें पुन: जन्म देता है। हम फिर से माता-पिता-स्त्री-पुत्र-बन्धु आदि देखते हैं।

परमेश्वर ने जीवात्माओं का और प्रकृति का मिलन कराया है। प्रकृति से युक्त होकर जीवों का जन्म है। जैसे कि तैत्तरीय उपनिषद् में कहा है कि परमेश्वर और प्रकृति से आकाश, आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल, जल से पृथिवी, पृथिवी से औषधियाँ, औषधियों से अन्न, अन्न से वीर्य, वीर्य से स्त्री एवं पुरूष। इन्हीं पाँच तत्वों से मनुष्य शरीर बना है।

इसीलिये स्वामी रामतीर्थ ने इसे अर्थात् प्रकृति एवं पांच तत्वों को हमारे "वास्तविक सगे-सम्बन्धी" कहा है। प्रकृति के रूपों में, समुद्र की व्यापकता समुद्र के अन्दर विराजमान, हिमाच्छादित पर्वतों से उच्च फैले हुए शिखर, बादलों के क्षणपरिवर्ती रूपरंग तथा इन पर पड़ती हुई सूर्य की किरणों की मनमोहक छवि परमेश्वर के इस जगत् के रचयिता होने का मान कराते हैं। उसी सर्वशक्तिमान परमेश्वर ने सूर्य चन्द्र, पृथिवी, नक्षत्र-ग्रह, ब्रह्माण्ड आदि की रचना की है। जो कि उसकी नियम-व्यवस्था अनुसार अपनी-अपनी जगह पर स्थित हैं। उस परमेश्वर का सामर्थ्य और बल अपरम्पार है। यह सब दृश्यमान जगत् सृष्टि-उत्पत्ति से पूर्व प्रलयकाल में तम अर्थात् मूल प्रकृति रूप में अन्धकार से आच्छादित था। सूक्ष्मातिसूक्ष्म परमात्मा से यह जगत् व्याप्त था। उस परमेश्वर ने अपने सामर्थ्य के कारण रूप से कार्य रूप में परिणत करके सृष्टि की रचना की। वही इसका पालनकर्त्ता और प्रलयकर्त्ता है। "चेतन प्रभु के संकल्प से अव्यक्त जगत् ने व्यक्त स्वरूप प्राप्त किया। सृष्टि और वेद के गम्भीर ज्ञान को पूर्णरूप से परमात्मा ही जानते हैं। जिसके कारण यह विविध-रूपा सृष्टि प्रकाश में आई, जो इसकी उत्पत्ति, स्थिति और प्रलयकर्त्ता है वह परमात्मा है।"-सत्यार्थ प्रकाश।।

वेदों में परमेश्वर के असंख्य गुण और नाम हैं। सबसे श्रेष्ठ नाम "ओ३म्" है। वह निराकार है उसकी कोई मूर्ति नहीं। मूर्ति तो हम हैं, जीव हैं, वह हमें सब जीवों का बोध कराता है। संसार की अनिव्यता एवं जीवात्मा की नित्यता का बोध कराता है।

"अहं सुवे पितरमस्य मूर्धन् मम योनिमप्स्वन्त : समुद्रे।
ततो वितिष्ठे भुवनानि विश्वोतामूं द्यां वर्मणोप स्पृशामि।।"
-अथर्ववेद, काण्ड-४, सुक्त-३०, मन्त्र-७।।

भाषार्थ-मैं इस जगत् के नियम के निमित्त पालन करने वाले गुण को उत्पन्न करता हूँ। मेरा घर अन्तरिक्ष में वर्त्तमान व्यापनशील रचनाओं के भीतर है, इसी से सब प्राणियों में व्यापक होकर वर्तमान हूँ और उस प्रकाशमान और अदीन प्रकृति से उत्पन्न हुए सूर्य को अपने ऐश्वर्य से छूता रहता हूँ।

भावार्थ-परमेश्वर सबमें व्यापक रहकर सबका पालनकर्त्ता और नियन्ता तथा उपास्य है।

"अतो देवा अवन्तु नो यतो विष्णुर्विचक्रमे।
पृथिव्या: सप्त धामभि:।।"
-ऋग्वेद, मंडल-१, सूक्त-22, मन्त्र-१६।।

पदार्थ-जिस सदा वर्तमान नित्य कारण से चराचर संसार में व्यापक जगदीश्वर पृथिवी को लेकर सात अर्थात् पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, विराट, परमाणु और प्रकृति पर्य्यन्त लोकों को जो सब पदार्थों को धारण करते हैं उनके साथ रचता है। उसी से विद्वान लोग हम लोगों को उक्त लोकों की विद्या को समझते वा प्राप्त कराते हुए हमारी रक्षा करते हैं। विद्वानों के उपदेश के बिना किसी मनुष्य का यथावत् सृष्टिविद्या का बोध कभी नहीं हो सकता।

परमेश्वर ने इस जगत् में तीन प्रकार का प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्ष प्राप्त होने वाला जगत् रचा है। अर्थात् एक पृथिवीरूप, दूसरा अन्तरिक्ष-आकाश में रहनेवाला त्रसरेणुरूप और तीसरा प्रकाशमय सूर्य आदि लोक तीन आधाररूप है। इनमें से आकाश में वायु के आधार से रहने वाला जो कारणरूप है वही पृथिवी और सूर्य आदि लोकों को बढ़ाने वाला है। परमेश्वर ने सूर्य लोक को अपने ताप और छेदन शक्ति द्वारा रचा है। इस जगत् को परमेश्वर के बिना कोई बनाने को समर्थ नहीं हो सकता, क्योंकि किसी का भी ऐसा सामर्थ्य नहीं है।

परमेश्वर, जीव और प्रकृति जगत् का नियन्ता है। तीनों अनादि हैं। जलरूप सृष्टि का होना, परमेश्वर के सत्य-सिद्धान्तों से हमारी इस भूमि का निर्माण होना, जल से तलछट जानने की क्रिया से पृथिवी का टापू रूप प्रकट होकर विस्तृत होना, फिर वनस्पति जगत् अन्य जीवधारियों और फिर मनुष्य का निर्माण होना, जगत् औह बृहद् आकाश दोनों के द्वारा ईश्वर प्रदत्त वेद ज्ञान तथा पंचभूत का ज्ञान मनुष्यों को मिलना-ये सब कार्य स्वयं नहीं होते। इसलिये सृष्टि किसी ने बनाई है। प्रकृति जड़ है, उसका नियन्त्रण कोई चेतन शक्ति करती है।

जिस कारण परमेश्वर सकल संसार को रचता है, इससे सब पदार्थ परस्पर अपने-अपने संयोग से बढ़ते हैं और ये पदार्थ क्रियामययज्ञ और शिल्पविद्या में अच्छी प्रकाश संयुक्त किये हुए बड़े-बड़े सुखों को उत्पन्न करते हैं। जैसे, पौधा उगता है, बढ़ता है, फूल खिलता है, फूल की सुगन्ध फैलती है। वृक्ष उगता है, बड़ा होता है, फलों से लद जाता है। चींटी चली जाती है, मीठे के कण तक पहुँच भी जाती है, फिर भी चलती रहती है। मनुष्य प्रकृति से बंधा अपने कर्म नहीं छोड़ सकता।

जगत् को रचने वाला परमेश्वर सब को पुष्ट करने हारे हृदयस्थ प्राण और जीव जो जानता है। मनुष्य-जीवन में प्राण सबसे श्रेष्ठ हैं। कर्म ही सृष्टि का प्राण है। जीव जो श्वास-प्रश्वास ले रहा है, परमेश्वर के द्वारा अन्न को खाता

(शेष पृष्ठ 7 पर)

पृष्ठ 2 का शेष-अर्थात् शारीरिक, आत्मिक...

आध्यात्मिक अन्ध-विश्वास, सांप्रदायिक कट्टर-वाद दूर करना। लिंग, वर्ण, रंग, जाति, देश के आधार पर भेदभाव रहित आत्मिक स्तर पर सबके सुख-दुःख, मान-अपमान को समान समझ, मानव मात्र से प्रेम करने वाला समाज बनाना।

एक सृष्टि एक सृष्टिकर्ता, एक ईश्वर, एक ईश्वरीय ज्ञान, एक धर्म के सिद्धांत का प्रचार करके विश्व मानव समाज में एकता लाना। एक सृष्टिकर्ता में सब मनुष्यों का पितृत्वभाव और सब जीवधारियों में परस्पर भ्रातृभाव के आधार पर सहिष्णु, स्नेही तथा सहयोगी समाज बनाना। वर्तमान विविधतापूर्ण विश्व के सम्पूर्ण मानवजाति के पूर्वज समान थे। सबकी भाषा एक थी। धर्म, सभ्यता और संस्कृति एक थी। इस ऐतिहासिक तथ्य का प्रकाश फैलाकर मानव एकता को दृढ़ करना।

इस विश्व ऐक्य के लिए विभिन्न मत संप्रदाय के अनुयायी तथा उनके विद्वानों से मेल करना होगा। उनके साथ वाद, संवाद, शास्त्रार्थ आयोजित करना होगा। मत और धर्म में अंतर बताने वाले सत्संग व सम्मेलन बार-बार करने होंगे। विश्व ऐक्य का ज्ञान देने वाले साहित्य आर्य समाज के पास हैं। आवश्यकता है इनका विश्व की भाषाओं में अनुदित व प्रकाशित कर संसार के सभी देशों के पाठकों तक पहुंचाया जाए। पर बाह्य विश्व को संगठित करने का यह कार्य तभी होगा जब आर्य समाज का आंतरिक संगठन दृढ़ होगा। संगठन के नेताओं की ऐसी योजना होगी, कार्यक्रम होगा। पर आर्य समाज के पास ऐसी कोई योजना नहीं है। इसका केन्द्रीय संगठन और नेतृत्व तो दशकों से तारतार हो चुका है। स्थानीय संगठन कहीं-कहीं सक्रिय है पर अधिकांश अधिकारी परंपरा पूर्ति के लिए, सक्रिय व कर्मठ दीखने के लिए कार्यक्रम करवाते हैं। सदस्य बढ़ाने, संगठन सुदृढ़ करने तथा आस पास के क्षेत्र में नए संगठन बनाने के लिए कोई सोच तक नहीं देखी जा रही है। कुछ पद व धन के स्वार्थी अधिकारी समाज का विस्तार ही नहीं करना चाहते। तो कुछ समाजों के लोग जातिवाद, प्रांतवाद व क्षेत्रवाद जैसी संकीर्ण भावना के कारण विवाद और विघटन कर रहे हैं। अतः पहले हमें आंतरिक संगठन ठीक करना होगा।

संगठन के मुख्य कारक हैं- अधिकारी और पुरोहित। संगठन के लिए समाज के प्रधान और मन्त्री को सभी सदस्यों के घर-परिवार से परिचित होना चाहिए। आत्मीय पारिवारिक संबंध स्थापित करना चाहिए। उनके साथ सतत संपर्क में रहना चाहिए। कोई सदस्य समाज के सत्संग, उत्सव में क्यों नहीं आ रहा है, यह पूछना, जानना, ध्यान रकना होगा। अधिकारी सदस्य के सुख-दुःख, स्वास्थ्य का ध्यान रखने तथा साथ देने वाले हों। समाज के सदस्य और सदस्यों के परिवारों को प्रशिक्षित और संगठित करने के लिए शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति के कार्यक्रम, व्यायाम, आत्मरक्षा कौशल, स्वास्थ्यरक्षा, योगाभ्यास, ध्यान, सत्संग, संवाद, स्पर्द्धा तथा विशेषतः त्योहारों का सपरिवार सामूहिक आयोजन करें। सदस्यों को सूचित व निमन्त्रित करें। उपस्थित न होने पर कारण जानें, अभिप्रेरित करे।

अधिकारी के पश्चात् पुरोहित की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। अतः समाज में विद्वान्, व्यवहार कुशल, स्थायी आचार्य व पुरोहित की व्यवस्था हो। जो परिवार को समाज से जोड़ने का कार्य करे। समाज में नये सदस्य जोड़े तथा नये स्थान पर संगठन बनाने की भूमिका तैयार करे। पुरोहित समाज के प्रत्येक सदस्य से सुपरिचित हो। प्रत्येक घर जाना आना हो। सबका नैतिक, आध्यात्मिक मार्गदर्शक हो। सबको सन्ध्योपासना अवश्य सीखाए। घर में यज्ञ, संस्कार, सत्संग कराने तथा समाज के सभी कार्यक्रमों में भाग लेने की प्रेरणा व सूचना करे। हम पुरोहित को अपने परिवार के सदस्य की तरह मानें। सुख-दुःख में साथ रहें, सम्मान दें।

सामाजिक उन्नति तथा आर्य समाज के उद्देश्य पूर्ति के अन्य भी उपाय है, पर विस्तारभय से लेख को यहीं विराम देते हैं।

पृष्ठ 4 का शेष-गृहपति के कर्त्तव्य...

सभी को पोषण प्राप्त होता है। सभी प्रकार के बलों और धनों के आप ही स्वामी हो। आपकी कृपा से मुझे अदानशीलता की भावना, तथा कुमति का प्रवेश न होने पावें। मैं इनसे दूर ही रहना चाहता हूँ।

अगले मंत्र में परमात्मा की स्तुति करता हुआ गृहपति कहता है-हे प्रभू। तू समूहों का नेता है, अभिषेक किया हुआ तू तेज स्वरूप है। फिर प्रार्थना करता है कि मुझे भी तेज प्रदान कर। मुझे धनों का स्वामी बना।

पुष्टिरसि पुष्ट्या मा समङ्ग्धि गृहमेधी गृहपतिं मा कृणु।
औदुम्बरः स त्वमस्मासुधेहि रयिं च नः सर्व वीरं नियच्छ रायस्पोषाय प्रति मुञ्चे अहं त्वाम्।।3।।

अर्थ-हे परमेश्वर तू। (पुष्टिः) वृद्धि रूप (असि) है (वृद्धया) वृद्धि के साथ (मा) मुझे (सम् अङ्ग्धि) संयुक्त कर। तू (गृहमेधी) घर के काम समझने वाला है (मा) मुझे (गृहपतिम्) घर का स्वामी (कृणु) कर। (सः) सो (औदुम्बरः) संगठन चाहने वाला (त्वम्) तू (अस्मासु) हम लोगों के बीच (नः) हमको (सर्ववीरम्) सबको वीर रखने वाला (रयिम्) धन (धेहि) दे। (च) और (नियच्छ) दृढ़कर, (अहम्) मैं (त्वाम्) तुझको (रायः) धन की (पोषाय) वृद्धि के लिए (प्रति मुञ्चे) स्वीकार करता हूँ।

भावार्थ-गृहपति परमात्मा की प्रार्थना करता हुआ कहता है कि हे परमात्मन्। आप वृद्धि रूप हैं कृपया मुझे भी सब प्रकार की वृद्धि देकर अपने साथ संयुक्त करें। आप घर की सभी आवश्यकताओं को समझने वाले हैं कृपया मुझे भी यह समझ देकर सच्चा गृहपति बनावें। कृपया मुझे घर को ठीक तरह से चलाने के लिए उचित मात्रा में धन प्रदान करते रहें।

अयमौदुम्बरो मणिवीरो वीराय बध्यते। स नः सनिं मधुमतीं
कृणोतु रयिं च नः सर्व वीरं नि यच्छात्।।4।।

अर्थ-(अयम्) यह (औदुम्बरः) संगठन चाहने वाला (मणिः) प्रशंसनीय (वीरः) वीर (परमात्मा) (वीराय) वीर पुरूष के लिए (बध्यते) धारण किया जाता है। (सः) वह (नः) हमारे लिए (मधुमतीम्) ज्ञान युक्त (सनिम्) लाभ (कृणोतु) करें। (च) और (नः) हमारे लिए (सर्ववीरम्) सबको वीर बनाने वाला (रयिम्) धन (नियच्छात्) नियत करें।

भावार्थ-परिवार संयुक्त रहे। परिवार में वीर पुरूष होवें। सब ज्ञान प्राप्त करें और पोषण के लिए धन की न्यूनता न रहे। इस प्रकार 14 मंत्रों के इस सूक्त ने गृहपति के कर्त्तव्यों का बोध करा दिया है।

पृष्ठ 6 का शेष-''परमेश्वर' जगत् का रचयिता

है, जल-पान करता है, अन्य क्रियाएँ करता है, प्रकृति के गुणों पर मुग्ध होकर वह जो क्षण-क्षण राग आलाप रही है, उसकी भिनभिनाहट को सुनता है-परन्तु वास्तव में वह कुछ नहीं सुनता। श्वास-प्रश्वास वा प्राण लेता हुआ भी परमेश्वर को अनुभव नहीं करता, संसार के विविध पदार्थों को देखता हुआ भी नहीं देखता। उसको विचारना, चाहिए कि परमेश्वर ही पूर्ण जगत् का आश्रय है, वही जगत् का सार है, उसका मनन किया जाये तो उसकी सत्ता को कोई भी इन्कार नहीं कर सकता। प्राकृतिक जगत् में जिधर नज़र उठती है उधर से परमेश्वर ही जीवन-मार्ग का उपदेश देता हुआ दीखता है। किसी शायर ने ठीक ही कहा है-''समाया है जब से तू नज़रों में मेरी, जिधर देखता हूँ उधर तू ही तू है।'' परमेश्वर के रचे हुए संसार में अनेकों उपकार ग्रहण किये जा सकते हैं। परमेश्वर के रचे हुए पदार्थों को देखकर हमें उसका धन्यवाद कर उसकी स्तुति करनी चाहिये। ये पदार्थ रचने वाले का निश्चय कराते हैं। जो मनुष्य परमेश्वर को नमस्कार करते हैं, उसकी स्तुति करते हैं उनको वह अपने अनुग्रह से विद्यादान से प्रसन्न करता है, उन्हें उनके कर्मानुसार सन्मार्गदर्शक ऋषि, उत्तम बुद्धि वाले तेजस्वी विद्वान बनाता है। वे मनुष्य सत्य भाषण से संयुक्त अविद्या आदि रोगों से रहित, शरीर व आत्मा की पुष्टि वाले होकर, ईश्वर की रक्षा को प्राप्त होते हैं। जो उस परमेश्वर को नहीं जानते, नास्तिक हो जाते हैं, वे पुरुष हीन होकर नष्ट हो जाते हैं। ''सूक्ष्मदर्शी ऋषि लोग वेद द्वारा परमेश्वर की शक्तियों को अनुभव करते हैं कि वह तीनों काल, तीनों लोकों में विराज कर सब सृष्टि का प्राणदाता है।''-अथर्ववेद, काण्ड-६, सूक्त-१०, मन्त्र-१-६।।

षड्शास्त्रानुसार-सांख्य-प्रकृति, योग-पुरुषार्थ, न्याय-परमाणु, वैशेषिक-काल, मीमांसा-कर्म-विस्तार एवं वेदान्त-ब्रह्म को सृष्टि रचना का कारण मानते हैं अर्थात् वेद, उपनिषद्, षड्शास्त्र आदि सभी प्रकारान्तर से ''परमेश्वर'' को ही सृष्टि व ''जगत् का रचयिता'' मानते हैं।

बी.एल.एम.गर्ल्ज कालेज नवांशहर की छात्रा प्रभदीप कौर जी.एन.डी.यू में प्रथम

बच्चों को अच्छे संस्कार मां के गर्भ के दौरान ही मिलने शुरू हो जाते हैं जिसके चलते ऐसे संस्कारों का प्रभाव बच्चों पर पूरा जीवन देखने को मिलता है। इन विचारों का खुलासा राहों रोड पर स्थित बी.एल. एम. गर्ल्ज कालेज नवांशहर में आयोजित एक विशेष समारोह के दौरान कालेज प्रबन्धक कमेटी के सचिव विनोद भारद्वाज ने किया।

श्री भारद्वाज जी ने बी.ए. प्रथम भाग की परीक्षा में यूनिवर्सिटी में पहला स्थान हासिल करने वाली छात्रा प्रभदीप कौर को सम्मानित करते हुये कहा कि उसकी इस उपलब्धि में उसके माता पिता विशेष तौर पर मां का अहम् योगदान है। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के तत्वावधान में नवांशहर में चल रही शिक्षण संस्था बी.एल.गर्ल्ज कालेज की छात्रा प्रभदीप कौर गुरु नानक देव विश्वविद्यालय में प्रथम आई है। इस संदर्भ में आर्य समाज नवांशहर की ओर से एक विशेष सम्मान समारोह का आयोजन किया गया जिसमें कालेज की छात्रा प्रभदीप कौर को सम्मानित किया गया। इस छात्रा ने बी.एल.एम.गर्ल्ज कालेज नवांशहर में बी.ए. सैकेंड सैमेस्टर में गुरु नानक देव विश्वविद्यालय में प्रथम स्थान प्राप्त कर कीर्तिमान स्थापित किया है। इस सम्मान समारोह में कालेज के प्रधान डा. सी.एम. भंडारी, उप प्रधान श्री सुरेन्द्र मोहन तेजपाल, सचिव श्री विनोद भारद्वाज, श्री देशबन्धु भल्ला एडवोकेट, श्री ललित मोहन पाठक, श्री वीरेन्द्र कुमार सरीन, मंत्री आर्य समाज श्री जिया लाल शर्मा, डी.ए. एन.बीएड कालेज के प्रोफैसर श्री विकास, कालेज की पूर्व प्राचार्य श्रीमती मीनाक्षी शर्मा, आर्य समाज नवांशहर के कोषाध्यक्ष श्री कुलवन्त राय शर्मा इत्यादि उपस्थित थे। कार्यक्रम के प्रारम्भ में प्रभदीप कौर ने भजन गाकर सभी को मंत्रमुग्ध कर दिया। इस अवसर पर कालेज के प्रधान डा.सी.एम. भंडारी ने छात्रा प्रभदीप कौर को विशेष रूप से बधाई देते हुये कहा कि जीवन में आगे बढ़ने के लिये परिश्रम और लग्न का होना बहुत ही आवश्यक है। उन्होंने कहा कि परिश्रम और अपने कार्य के प्रति निष्ठावान होकर ही उन्नति की बुलन्दियों को छुआ जा सकता है। इसके पश्चात कालेज के सचिव श्री विनोद भारद्वाज जी ने प्रभदीप कौर की मां को बधाई देते हुये कहा कि माता ही निर्मात्री होती है जो उसे अपने संस्कारों से पल्लवित और पुष्पित कर सही दिशा निर्देश करती है इसलिये माता को प्रथम गुरु माना जाता है। उन्होंने कहा कि आज सभी के लिये हर्षोल्लास का दिन है इसलिये हम इसे एक उत्सव मानते हैं। उन्होंने इस अवसर पर प्रभदीप कौर को बधाई दी और उसके उज्वल भविष्य के लिये शुभकामनाएं दी। उन्होंने कहा कि योग्यता, भावनात्मकता और आध्यात्मिकता इन तीनों का सम्मिलन ही हमारी उन्नति का सोपान है और यह तीनों विनम्रता से प्राप्त की जा सकती हैं। इसके बाद कालेज की प्राचार्य श्रीमती तरनप्रीत कौर ने छात्रा प्रभदीप कौर को बधाई देते हुये कहा कि यह सम्मान बहुत बड़ा है।

छात्रा प्रभदीप कौर

इस छात्रा ने हमारे शहर, कालेज के साथ साथ अपने माता पिता, गुरुजनों और अपना नाम पूरे पंजाब में रोशन किया है। उन्होंने प्रभदीप कौर के साथ साथ उसकी मां, भाई और गुरु को भी बधाई दी। प्रभदीप कौर ने संस्कृत, संगीत और होम साईंस विषय में अधिकतम अंक प्राप्त किये। प्रभदीप कौर ने म्युजिक मे 100 में से 98 अंक, संस्कृत में 100 में से 97 अंक प्राप्त किये। प्रभदीप कौर ने बी.ए. सैकेंड सैमेस्टर में 800 में से 698 अंक प्राप्त किये। इस प्रकार उसने 87.25 प्रतिशत अंक प्राप्त किये। इस तरह प्रभदीप कौर ने अपना एवं कालेज का नाम रोशन किया है। अंत में कालेज की प्राचार्य श्रीमती तरनप्रीत कौर ने आए हुये सभी अतिथियों का आभार व्यक्त किया।

-प्रि. तरनप्रीत कौर

सत्यार्थ प्रकाश से सम्बन्धित प्रश्नोत्तरी

श्री सुरेन्द्र मोहन तेजपाल अधिष्ठाता साहित्य विभाग द्वारा प्रसिद्ध विद्वानों के सहयोग से तैयार प्रश्नोत्तरी। आशा है आर्य मर्यादा के पाठक इससे लाभान्वित होंगे।

प्र.51-विद्या किस-किस को पढ़नी चाहिए?
उत्तर-सभी को पढ़नी चाहिए।
प्र.52-सबसे बड़ा दान कौन सा है?
उत्तर-वेद विद्या का।
प्र.53-पञ्च महायज्ञ कौन-कौन से हैं?
उत्तर-ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, अतिथियज्ञ और बलिवैश्वदेव यज्ञ।
प्र.54-क्या स्त्री को पढ़ने का अधिकार है?
उत्तर-हाँ है।
प्र.55-चार आश्रम कौन-कौन से हैं?
उत्तर-ब्रह्मचर्य आश्रम, गृहस्थ आश्रम, वानप्रस्थ आश्रम, और सन्यास आश्रम।
प्र.56-किस आश्रम को श्रेष्ठ माना गया है?
उत्तर-गृहस्थ आश्रम को।
प्र.57-विवाह के लिए अनुकूल आयु क्या है?
उत्तर-कन्या की 16 से 24 वर्ष तथा पुरूष की 25 से 48 वर्ष तक है।
प्र.58-राजा कैसा होना चाहिए?
उत्तर-राजा सदाचारी, क्षत्रिय और बलवान होना चाहिए।
प्र.59-सेना कितने प्रकार की होती है?
उत्तर-तीन प्रकार की-थल सेना, जल सेना, वायु सेना।
प्र.60-वेद कितने हैं?
उत्तर-वेद चार हैं-ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद।
प्र.61-वेद ईश्वरकृत हैं या मनुष्यकृत?
उत्तर-ईश्वरकृत हैं।
प्र.62-वेद पढ़ने का अधिकारी कौन है?
उत्तर-सभी स्त्री और पुरूष वेद पढ़ने के अधिकारी हैं।
प्र.63-क्या ईश्वर अपने भक्तों के पाप क्षमा करता है?
उत्तर- नहीं।
प्र.64-सृष्टि की रचना कौन करता है?
उत्तर-ईश्वर करता है।
प्र.65-तीन अनादि सत्ताएं कौन सी हैं?
उत्तर-ईश्वर, जीव और प्रकृत्ति।
प्र.66-सृष्टि में मनुष्य सबसे पहले कहां पैदा हुआ?
उत्तर-तिब्बत देश में।
प्र.67-मनुष्य सृष्टि के आरम्भ में किस अवस्था में पैदा हुआ?
उत्तर-युवा अवस्था में।
प्र.68-जीवन में पवित्रता कैसे आती है?
उत्तर-धर्म के आचरण से।
प्र.69-मनुष्य के अन्दर पाँच शत्रु कौन से हैं?
उत्तर-काम, क्रोध, लोभ,मोह और अहंकार।
प्र.70-मनुष्य के अन्दर गुण कितने होते हैं?
उत्तर-तीन-सत्वगुण, रजोगुण और तमोगुण।
प्र.71-मनुष्य में कौन सा गुण सर्वश्रेष्ठ है?
उत्तर-सत्वगुण।
प्र.72-देवपूजा किसे कहते हैं?
उत्तर-माता-पिता, आचार्य और अतिथि की सेवा करना।
प्र.73-मनुष्य को किसका संग करना चाहिए?
उत्तर-जो सत्यवादी और धर्मात्मा हो।
प्र.74-जब भाई-भाई लड़ते हैं तो कौन लाभ उठाता है?
उत्तर-विदेशी।
प्र.75-महाभारत का युद्ध कितने वर्ष पहले हुआ था?
उत्तर-लगभग पाँच हजार वर्ष पहले।
प्र.76-आपस की फूट से किसका विनाश हुआ?
उत्तर-कौरव, पाँड्व और यादवों का।
प्र.77-मनुष्य के लिए सबसे उपयोगी पशु कौन सा है?
उत्तर-गाय।
प्र.78-गाय से हमें क्या मिलता है?
उत्तर-दूध, दहीं, लस्सी,घी, गौमूत्र, गोबर और बैल।
प्र.79-क्या मनुष्य को दूसरों के साथ भोजन करना चाहिए?
उत्तर-नहीं करना चाहिए।
प्र.80-शिष्य को भोजन कब करना चाहिए?
उत्तर-अपने गुरू के भोजन करने के पश्चात।
प्र.81-महाराज युधिष्ठिर ने कौन सा यज्ञ किया था?
उत्तर-राजसूय यज्ञ।
प्र.82-सत्य और असत्य को जानने वाला कौन है?
उत्तर-मनुष्य का आत्मा।
प्र.83-मनुष्य जाति की उन्नति कैसे होती है?
उत्तर-सत्य के उपदेश से।
प्र.84-सत्यार्थ प्रकाश लिखने का मुख्य उद्देश्य क्या था?
उत्तर-सत्य और असत्य का प्रकाश करना
प्र.85-सुवर्णभूमि किस देश का नाम है?
उत्तर-आर्यावर्त्त देश का।
प्र.86-पाँच हजार वर्ष पहले भूगोल में किसका एकमात्र राज्य था?
उत्तर-आर्यों का सार्वभौम चक्रवर्त्ती राज्य था।
प्र.87-युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में चीन के किस राजा ने भाग लिया था?
उत्तर-भगदत्त।
प्र.88-युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में अमेरिका के किस राजा ने भाग लिया था?
उत्तर-बब्रुवाहन ने।
प्र.89-युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में ईरान के किस राजा ने भाग लिया था?
उत्तर-शल्य
प्र.90-भूगोल में सब प्रकार की विद्या किस देश से फैली है?
उत्तर- आर्यावर्त्त से।
प्र.91-मोक्षमूलर कहां के निवासी थे?
उत्तर-जर्मनी के।
प्र.92-जब भाई-भाई को मारने लगे तो क्या होगा?
उत्तर-विनाश।
प्र.93-जब विनाश का समय आता है तो बुद्धि कैसी हो जाती है?
उत्तर-विपरीत बुद्धि हो जाती है।
प्र.94-पाषाण आदि मूर्त्तिपूजा किनसे शुरू हुई?
उत्तर-जैनियों से।
प्र.95-अश्वमेध यज्ञ किसे कहते हैं?
उत्तर-राजा न्याय और धर्म से प्रजा का पालन करे।
प्र96-गौमेध यज्ञ किसे कहते हैं?
उत्तर-अन्न, इन्द्रियां, किरण, पृथ्वी आदि को पवित्र रखना।
प्र.97-नरमेध यज्ञ किसे कहते हैं?
उत्तर-जब मनुष्य मर जाए तो उसके शरीर का विधिपूर्वक दाह करना।
प्र.98-राजा भोज कहां के राजा थे?
उत्तर-उज्जैन नगरी।
प्र.99-श्रीकृष्ण कैसे महापुरूष थे?
उत्तर-आप्त पुरूष थे।
प्र.100-आप्त पुरूष किसे कहते हैं?
उत्तर-जिसने जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त कोई बुरा कार्य न किया हो

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा गायत्री प्रिंटिंग प्रैस, मण्डी रोड जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसकी स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ। E-mail: apspunjab2010@gmail.com, www.aryapratinidhisabha.org
आर्य मर्यादा में प्रकाशित सारी लेखन सामग्री से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। प्रत्येक विवाद के लिए न्याय क्षेत्र जालन्धर होगा।